छत्तीसगढ़ राज्य की वन नीति - 2001

1 – भूमिका

1.1 भारत शासन के संकल्प क्रमांक 3-1/1986/एफ. पी. दिनांक 7 दिसम्बर 1988 द्वारा तैयार की गई राष्ट्रीय वन नीति राष्ट्रीय परिपेक्ष्य में वन प्रबंधन की समस्याओं और उनके समाधान हेतु आवश्यक कार्यवाही पर प्रकाश डालती है।

1.2 नवगठित छत्तीसगढ़ राज्य की स्थापना 1 नवबंर 2000 को हुई है। राज्य में वनों के भावी विकास हेतु एक ऐसी नवीन रणनीति तैयार करने की आवश्यकता है, जिसमें राज्य की विशेष आकांक्षाओं एवं अपेक्षाओं का प्रतिनिधित्व हो। चूंकि वन विषय राष्ट्र के संविधान की समवर्ती सूची में शामिल है। अतएव राज्य की वन नीति वर्तमान राष्ट्रीय वन नीति 1988 की मूल अवधारणाओं के अनुरूप होनी चाहिए।

1.3 छत्तीसगढ़ राज्य जिसका विस्तार 17^0 $46^|$ से 24^0 $6^|$ उत्तर अक्षांश तथा 80^0 $15^|$ से 84^0 $51^|$ पूर्वी देशांतर के मध्य हैं, के कुल भौगोलिक क्षेत्र 1,35,224 वर्ग कि.मी. का लगभग 44% क्षेत्र वनों से आच्छादित हैं और इसमें 4 प्रमुख नदी प्रणालियों जैसे महानदी, गोदावरी, नर्मदा और गंगा का जलग्रहण क्षेत्र शामिल है। महानदी, इंद्रावती, हसदेव, शिवनाथ, अरपा, ईब राज्य की प्रमुख नदियां है। राज्य की जलवायु मुख्यतः सह आद्र तथा औसत वार्षिक वर्षा 1200 से 1500 मि.मी. है।

1.4 राज्य में विगत वर्षो में वनों की गुणवत्ता में गंभीर ह्रास परिलक्षित हुआ है। यह स्थिति मुख्यतः वनों के ऊपर अत्याधिक जैविक दबाव तथा जलाऊ लकड़ी, चारा एवं काष्ठ की निरंतर बढ़ती मांग अप्रभावी वन सुरक्षातंत्र, आवश्यक क्षतिपूर्ति वृक्षारोपण एवं पर्यावरणीय सुरक्षा उपायों को सुनिश्चित किये बिना वन भूमि का गैर वानिकी उपयोगों के लिये प्रत्यावर्तन तथा वनों को राजस्व प्राप्ति का साधन मानने की प्रवृत्ति के कारण उत्पन्न हुई है।

1.5 राज्य के वनों को दो प्रमुख वर्गो में विभाजित किया गया है, यथा उष्णकटिबंधीय आद्र पर्णपातीय एवं उष्ण - कटिबंधीय शुष्क पर्णपातीय वन राज्य की दो प्रमुख वृक्ष प्रजातियाँ साल (शोरिया रोबस्टा) तथा सागौन (टेक्टोना ग्रान्डिस) हैं। इसके अतिरिक्त अपर क्षेत्र में बीजा (डिप्ट्रोकार्पस मार्सूपियम) साजा (टर्मिनेलिया टोमेन्टोसा) धावड़ा (ऐनामाईसिस लैटिफोलिया) महुआ (मधुका इंडिका) तेन्दू (डाईयोस्पाईरस मिलैनौजाईलान) प्रजातियाँ है। मध्य क्षेत्र में आंवला (इम्बिलिका ऑफिस्निेलिश) कर्रा (कोलीस्टेन्थस कोलिनस) तथा बांस (डेन्ड्राकैलामस स्ट्रेक्टिस) आदि महत्वपूर्ण प्रजातियाँ हैं।

1.6 जैव भौगोलिक दृष्टिकोण से छत्तीसगढ़ राज्य डेकन जैव क्षेत्र में शामिल है तथा इसमें मध्य भारत के प्रतिनिधि वन्य प्राणियों जैसे शेर (पैन्थरा टिगरीस) तेन्दुआ (पैन्थरा पार्ड्स) गौर (बॉस गौरस) सांभर (सेरवस यूनिकोलर) चीतल (एक्सेस) नीलगाय (बोसेलाफस ट्रेगोकेमेलस) एवं जंगली सुअर (सस सेक्रोफा) पाये जाते है। दुर्लभ वन्य प्राणियों जैसे वन भैंसा (बूबालस बूबालिस) तथा पहाड़ी मैना (ग्रेकुला रिलिजिओसा) इस राज्य की गौरवशाली धरोहर है जिन्हें क्रमशः राज्य पशु एवं राज्य पक्षी घोषित किया गया है।

1.7 यह राज्य, कोयला, लोहा, बॉक्साइट, चूना, कोरंडम, हीरा, स्वर्ण, टीन, इत्यादि खनिज संसाधनों से परिपूर्ण है जो मुख्यतः वन क्षेत्रों में पाये जाते है।

1.8 राज्य की जन संख्या आदिवासी बाहुल्य है जो आर्थिक एवं सांस्कृतिक रूप से वनों पर निर्भर है। इसके अतिरिक्त बड़ी संख्या में गैर आदिवासी, भूमिहीन एवं आर्थिक दृष्टि से पिछड़े समुदाय भी वनों पर निर्भर है।

2 – मूल उद्देश्य

2.1 राज्य वन नीति को संचालित करने वाले मूल उद्देश्य निम्नानुसार है :-

0 राज्य के विपुल संसाधन को निरंतरता के आधार पर स्थानीय निवासियों के दीर्घ कल्याण हेतु चिन्हांकित कर उनके उन्मुक्त उपभोग को सामुदायिक नियंत्रण एवं प्राथमिकता के आधार पर संरक्षित एवं प्रबंधित संसाधन के रूप में मान्य करना।

0 प्रमुख वनोपज (लकड़ी) से लघु वनोपज, एकल स्तर से बहुस्तरीय वन प्रबंधन तथा प्रतिकात्मक प्रजाति से वन्य प्राणियों के समस्त छोटे बड़े घटकों को सामानुपातिक महत्व दिया जाना।

0 राज्य के वनों को संरक्षित एवं संवर्धित कर पर्यावरणीय स्थायित्व तथा पारिस्थितिकीय संतुलन स्थापित करना।

0 जैविक रूप से सम्पन्न प्राकृतिक वन, जो आदिवासी जनजीवन के प्रमुख सांस्कृतिक आधार है को सुरक्षित रखकर राज्य के जैव सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित रखना।

0 नदियों जलाशयों के जल ग्रहण क्षेत्रों में होने वाले भूक्षरण एवं वन आवरण कमी को नियंत्रित करना ताकि बाढ़ एवं सूखे की स्थिति उत्पन्न न हो। निरंतर गिर रहे भू-जल स्तर को उच्चतम उपयोग स्तर पर लाना और जलाशयों में गाद जमा होने की गति में कमी लाना।

0 कम वन क्षेत्र वाले जिलों वृक्ष रहित अनुत्पादक भूमि पर कृषि वानिकी एवं वृक्ष खेती जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से वन आवरण में वृद्धि करना।

0 वनों की धारक क्षमता को ध्यान में रखकर ग्रामीण एवं आदिवासी जनता की जलाऊ एवं छोटी लकड़ी, चारा एवं लघु वनो उपज की आवश्यकताओं की पूर्ति करना।

0 वनों को आर्थिक लाभ का श्रोत न मानकर, राज्य के पर्यावरणीय स्थायित्व एवं परिस्थितिकीय संतुलन को सर्वोच्च प्राथमिकता देना।

0 उपरोक्त उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु युक्ति युक्त नीति एवं वैधानिक सरंचना सृजित करना।

3 – वन प्रबंधन का अनिवार्यताऐं :-

3.1 विद्यमान वन एवं वन भूमि को पूर्ण संरक्षण प्रदान कर उनकी उत्पादक में सुधार किया जाना चाहिए। परिष्कृत वैज्ञानिक पद्धतियों से काष्ठ विदोहन एवं वन उपयोग को प्रोत्साहित कर उच्चतम आर्थिक लाभ प्राप्त किया जाना चाहिए।

3.2 राज्य की सम्पूर्ण जैव संस्कृति विविधता को संरक्षित रखने के लिये राष्ट्रीय उद्यानों एवं वन्य प्राणी अभ्यारण्यों, जैव संरक्षित क्षेत्रों एवं अन्य संरक्षित क्षेत्रों का सुदृढीकरण कर उनमें समुचित विस्तार किया जाना चाहिए।

3.3 वनों से प्राप्त होने वाली विविध प्रकार के उत्पादों तथा सेवाओं को दृष्टिगत रखते हुए भौतिक, द्रव्यिक, मानवीय, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं पर्यावरणीय परिसम्पत्तियों और उनके समुचित अधिकारिता सम्पन्न परिवेश को केन्द्र बिन्दु मानते हुए, लोक संरक्षित क्षेत्र एक ऐसा क्रियाशील व जनोन्मुखी संरचना की अवधारणा है। जिसमें जैव विविधता को अक्षुण्ण रख, उसके सतत् उपयोग से स्थानीय समुदायों की बुनियादी आवश्यकताओं की परिकल्पना की गई है। अतः वनवासियों की आजीविका सुरक्षा के सुद्दढ़िकरण हेतु, लोक संरक्षित क्षेत्रों का जाल बिछाया जाना चाहिए। जिसमें गरीबी उन्मूलन हेतु परिसम्पत्तियों का बैंक बन सके।

3.4 वनों के समीप रहने वाले लोगों हेतु पर्याप्त चारा, जलाऊ तथा छोटी इमारती लकड़ी का प्रावधान आवश्यक है ताकि वनों की सतत् धारक क्षमता में होने वाले भावी ह्रास को रोका जा सके। चूंकि ग्रामीण क्षेत्रों में जलाऊ लकड़ी, ऊर्जा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण साधन है। इसलिए लकड़ी का उत्पादन बढ़ाने के लिये वनीकरण कार्यक्रम को प्रभावकारी रूप से क्रियान्वित किया जाना चाहिए। इसकी बढ़त मांग के कारण वनों पर होने वाले दबाव को कम करने के लिए जलाऊ लकड़ी के स्थान पर ऊर्जा के अन्य वैकल्पिक स्त्रोतों को प्रोत्साहित किया जाए।

3.5 अन्य लघु वनोपज तथा औषधिय पौधे आदिवासीयों एवं वनों पर आश्रित अन्य समुदायों के जीवनयापन के महत्वपूर्ण साधन है। ऐसे उत्पादों को पूर्ण संरक्षण दिया जाना चाहिए तथा इन्हें परिष्कृत रूप से विनाशविहिन विदोहन द्वारा रोजगारमूलक एवं आय संवर्धन का साधन बनाया जाना चाहिए।

लघु वनोपज वनवासियों की आजीविका के प्रमुख स्रोत है। यथा संभव कच्चे माल के रूप में लघुवनोंपज को प्रदेश के बाहर न भेजते हुए, स्थानीय स्तर पर ही इनका प्रसंस्करण एवं मूल्यसंवर्धन प्रोत्साहित किया जाए।

3.6 प्राकृतिक वनों पर दबाव कम करने के लिए शहरी क्षेत्रों में वनोत्तर क्षेत्रों से उत्पादित काष्ठ एवं बल्ली प्रदाय किया जाना आवश्यक है। इसलिए राज्य शासन को कृषि वानिकी, वृक्ष खेती को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

3.7 समस्त जैविक सांस्कृतिक धरोहरों की सुरक्षा तथा बौद्धिक सम्पदा अधिकारों में अवांछित हस्तक्षेप एवं राज्य तथा राज्य के बाहर जैविक चोरी के खतरे से रोकथाम हेतु समुचित नीतियों तथा वैधानिक उपायों का निर्धारण किया जाना चाहिए।

3.8 राज्य के समस्त वन क्षेत्रों का विधिवत रूप से स्वीकृत कार्य आयोजना के अनुरूप प्रबंधन किया जाना चाहिए।

रणनीति :-

राज्य के वन प्रबंधन के उद्देश्यों एवं अनिवार्यताओं को निम्नानुसार एक सुपरिभाषित रणनीति द्वारा तैयार किया जा सके।

4.1 वन भूमि :-

राष्ट्रीय वन नीति का प्रमुख उद्देश्य राष्ट्र के एक तिहाई भाग को वनाच्छादित करना है। यद्यपि छत्तीसगढ राज्य इस दृष्टिकोण से विशिष्ट है कि इसका एक तिहाई से अधिक भौगोलिक क्षेत्र वनाच्छादित है, परन्तु यहां ऐसे भी कुछ जिले है जहाँ वनक्षेत्र निर्धारित मानदण्ड से कम है और जहां विद्यमान वन आवरण को संरक्षित रखते हुए उनके विस्तार की आवश्यकता है।

राज्य से उद्गमित एवं प्रवाहित होने वाली नदियों के जलग्रहण क्षेत्रों में पहाड़ों एवं दृष्यावलियों पर वृक्ष आवरण की सुरक्षा अति आवश्यक है।

4.2 राज्य के वनो का प्रबंधन :-

4.2.1 किसी भी वन क्षेत्र को बिना पूर्व स्वीकृत कार्य आयोजना/ प्रबंध योजना जो राष्ट्रीय / राज्य वन नीति के आधार -भूत सिद्धांतों एवं वानिकी प्रबंध के सतत् विकासशील सिद्धांतों पर आधारित हो, कार्य करने हेतु स्वीकृती न दी जाय। वनों पर वन प्रबंध के प्रभाव का समय-समय पर निर्धारित मापदण्ड एवं सूचकांकों द्वारा अनुश्रवित किया जाय। राज्य को कार्य आयोजना /प्रबंध आयोजना के प्रावधनों के सुनिश्चित क्रियान्वयन हेतु एक अनुश्रवण प्रणाली में विभाग के लिए आवश्यक मार्गदर्शी निर्देश प्रसारित करना चाहिए।

4.2.2 कम वन आवरण वाले जिलों में वैज्ञानिक एवं तकनीकी उपायों द्वारा विद्यमान वनों की उत्पादता बढ़ाने तथा आवरण में सुनिश्चित विस्तार की आवश्यकता है ताकि स्थानीय निवासियों की वनोपज मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति सुनिश्चित हो सके।

4.2.3 राज्य में किसी भी बाहरी प्रजाति को शासकीय अथवा अशासकीय माध्यम से अपनाया न जाय, जब तक पारिस्थितिकीय, वन, समाज शास्त्र एवं कृषि विशेषज्ञों के दीर्घगामी वैज्ञानिक परीक्षण से यह सुस्पष्ट न जाये कि उक्त प्रजाति राज्य के लिए उपयोगी है। इसका यहां के स्थानीय वनस्पति पारिस्थितिकीय एवं जैव सांस्कृतिक परिवेश पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ेगा।

4.2.4 राज्य के वन प्रबंधन का आधार संयुक्त वन प्रबंध होना चाहिए। सभी संयुक्त वन प्रबंधन समितियों जैसे ग्राम प्रबंधन समिति, वन सुरक्षा समिति एवं इको विकास समिति में भूमिहीन, सीमान्त कृषक एवं महिलाओं की भागीदारी, निर्णय लेने के सभी स्तरों पर सुनिश्चित करने हेतु विशिष्ट प्रावधान किया जाय।

वनांचल एवं ग्रामीण क्षेत्रों में निवासरत व्यक्तियों के अधिकाधिक क्षमताओं का उपयोग सहभागी वन प्रबंध कार्यक्रम में सुनिश्चित रूप से किया जाना चाहिए। राज्य में सहभागी वन प्रबंध कार्यक्रम को सुदृढ करने हेतु वनवासियों के वन आधारित आर्थिक कार्यक्रमों में विस्तार किया जाना चाहिए और उन्हें वित्तीय संस्थाओं से प्राप्त होने वाले आर्थिक सहयोग को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

4.2.5 राज्य में सतत् स्थायी वानिकी विकास, जीविकोपार्जन संरक्षा तथा जैव सांस्कृतिक विधिता के संरक्षण हेतु लोक संरक्षित क्षेत्रों (पी.पी.ए.) की स्थापना की जानी चाहिए। स्वीकार्य प्रबंधन के इस मूलभूत परिवर्तन को संरक्षण - विकास रूढ़वादिता के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत संकटसूचक संकेतो, मानवीय संवेदनाओं जैसे सामाजिक सांस्कृतिक मान्यताओं, मानदण्डों एवं पद्धतियों जो हमारी ऐतीहासिक सांस्कृतिक एवं परम्पराओं के प्रतिसूचक है से जोड़कर देखा जाना चाहिए क्योकि इसमें सफलता के बेहतर अवसर सन्निहित है।

4.2 अधिकार एवं सुविधायें :-

राज्य, वनांचलों तथा वन क्षेत्रों के आस-पास रहने वाले लोगों को वनों में प्रवेश तथा उसमें पाये जाने वाले उत्पादों को अपनी नीजी उपयोग में लाने के परम्परागत अधिकारों तथा सुविधाओं को मान्यता देता है। इस प्रकार के अधिकारों व सुविधाएं जिन्हें निस्तार कहते है प्रायः विधि प्रदत्त एवं परम्परागत है तथा राज्य के अधिकांश लोगों के जीवन स्तर में गुणात्मक सुधार हेतु आवश्यक है।

4.3.1 निस्तार जिसमें चराई एवं सूखी जलाऊ लकड़ी का एकत्रीकरण जैसे अधिकार एवं सुविधाएं शामिल है सदैव वनों के धारक क्षमता पर आधारित होने चाहिए। इस धारक क्षमता को अधिक पूंजीनिवेश, वन संवर्धन अनुसंधान तथा क्षेत्र के सामाजिक एवं आर्थिक विकास द्वारा अनुकूलतम स्तर पर प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए। पालतू बांध पर खिलौने की प्रथा को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। समुदाय की ऐसी आवश्यकताएं जिन्हें विद्यमान प्राकृतिक वनों से पूरा किया जाना संभव न हो, को वनोत्तर क्षेत्रों में सामाजिक वानिकी/ कृषि वानिकी वृक्ष खेती द्वारा पूर्ण किया जाना चाहिए।

4.3.2 वन क्षेत्रों में निवासरत व्यक्तियों जिन्हें परम्परागत अधिकार एवं सुविधाएं प्रदत्त है, को इस प्रकार प्रेरित किया जाना चाहिए जिससे वे उन वन क्षेत्रों जहां से वे लाभ प्राप्त कर रहे है को स्वयं संरक्षित एवं विकसित कर सकें। वन सबंधित अधिकार एवं सुविधाएं मुख्यतः प्राकृतिक वनों की सीमा से 5 किलो मीटर की परिधि में रहने वाले समुदायों के निजी उपयोगों के लिए होना चाहिए। यह आशा की जाती है कि संयुक्त वन प्रबंधन कार्यक्रम से जनता को अपने परम्परागत अधिकार एवं सुविधाओं को वनों के धारक क्षमता के अनुरूप सीमित करने की प्रेरणा प्राप्त होगी।

4.3.3 वन एवं वनों के आसपास रहने वाले आदिवासियों एवं अन्य गरीब व्यक्तियों का सामाजिक आर्थिक तथा सांस्कृतिक जीवन वनों के इर्द गिर्द केन्द्रित है। इन समुदायों के जलाऊ, चारा लघुवनोपज एवं इमारती लकड़ी संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति प्राथमिकता के आधार पर जैव विविधता एवं संरक्षण को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए।

4.4 साल एवं बांस वनों का प्रबंधन :-

साल एवं बांस के वन राज्य के वन पारिस्थित की महत्वपूर्ण घटक है। राज्य में साल एवं मिश्रित वनों के मध्य ऐसे वृहद संक्रमिक वन क्षेत्र भी है जिन्हें विशिष्ट प्रबंधन पद्धतियों की आवश्यकता है। ऐसे वन क्षेत्र न केवल पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण से संवेदन शील एवं आवश्यक है अपितु वनों एवं वनों के आसपास निवास करने वाले ग्रामीणों की जीविकोपार्जन संबंधी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति भी करते है। अतः राज्य को इन संक्रमिक साल वनों को विशेष उपचार प्रदाय कर तथा बिगड़े बांस वनों को पुनरूद्धार द्वारा तथा अच्छे बांस वनों के समुचित रख रखाव कर इनके प्रबंधन को प्रभावी उत्पादकता बढ़ाने की दिशा में विशेष प्रयास किये जाने चाहिए।

4.5 लघुवनोपजों का संरक्षण :-

राज्य में अकाष्ठीय वनोपज या लघुवनोपज जैसे तेंदूपत्ता, सालबीज, इमली, चिरौंजी, कुल्लू एवं धावड़ा, गोंद, कोसा, ककून, शहद इत्यादि का संग्रहण आदिवासियों, भूमिहीनों, सीमांत कृषकों एवं अन्य गरीब समुदायों के जीविकोपार्जन संरक्षा हेतु महत्वपूर्ण घटक है। ऐसा भी कहा जा सकता है कि लघु वनोपज गरीब ग्रामवासियों के प्रमुख आधार है न कि कथित वृहदकाष्ठीय वनोपज। लघु वनोपज जैसे तेंदुपत्ता एवं साल बीज से शासन को काफी राजस्व भी मिलता है जिसे अब संग्राहकों में ही वितरित किया जा रहा है।

4.5.1 राज्य को छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज (व्यापार एवं विकास) सहकारी संघ मर्यादित के माध्यम से राज्य के भीतर लघुवनोपजों का सतत् स्थाई उपयोग एवं दीर्घगामी संरक्षण हेतु आवश्यक उपाय सुनिश्चित करना चाहिए।

4.5.2 राज्य शासन को पंचायत उपबंध (अनुसूचित क्षेत्रों का विस्तार) अधिनियम 1990 के प्रावधानों के अनुसार लघु वनोपज पर स्थानीय समुदायों को मालिकाना हक देने हेतु आवश्यक कार्य करना चाहिए।

4.6 औषधि पौधों का संरक्षण :-

सभ्यता के प्रारंभ से वन बहुमूल्य औषधि पौधों के स्रोत रहे है। राज्य के समृद्ध औषधी एवं शाकीय पौधों को दृष्गित रखते हुए इनके अंतः स्थलीय एवं बाह्य स्थलीय संरक्षणः घरेलूकरण तथा विनाशविहिन विदोहन हेतु स्थानीय व्यक्तियों जैसे परम्परागत ओझा, गुनिया तथा वैद्यों के सक्रिय सहयोग से एक प्रक्रिया विकसि त की जानी चाहिए। ग्रामीणों विशेषकर आदिवासियों के सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक एवं औषधिय परम्परा को इनके समुदाय आधारित संरक्षण एवं उपयोग का आधार बनाना चाहिए।

4.7 वन संरक्षण :-

वन एक सर्व सुलभ संसाधन होने के कारण विविध प्रकार के दबावों जैसे चोरी, अग्नि, अवैध चराई तथा अतिक्रमण हेतु अत्यन्त संवेदनशील है वन संसाधन जैसे काष्ठ एवं वन्य जीव एवं उनके अंगो की चोरी, दूसरे अपराधों की तुलना में कम जोखिम एवं अधिक लाभ वाले अपराध माने जाते है। अनियंत्रित वन अग्नि से जैव विविधता तथा वनों के पुनरूत्पादन में अत्यधिक क्षति होती है साथ ही वन अग्नि उन जैविक पदार्थो तथा

सूक्ष्म जीवों को भी नष्ट कर देती है जो वनों की परिस्थितिकीय विकास के लिए अति आवश्यक है। पालतू पशुओं द्वारा वनों में अनियंत्रित चराई वनों के अवमूल्यन, अपघटन तथा पुनरूत्पादन में कमी का प्रमुख कारण है। खेती के लिए वन भूमि में अतिक्रमण, वनों के समाप्ति का एक प्रमुख कारण है अतः वनों की सुरक्षा को अत्यधिक प्रभावी व सुदृढ़ बनाने की आवश्यकता है।

4.7.1 स्थानीय लोगों को शामिल करते हुए ग्रामीण स्तर पर समितियों का निर्माण कर सुरक्षा तंत्र को अधिक कारगर बनाया जाना चाहिए एवं इन समितियों को अधिक सक्षम बनाने के लिए उन्हें और अधिकतर तथा प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

4.7.2 वन अपराध प्रकरणों एवं अपराधियों को नियंत्रित करने के लिए युक्ति युक्त वैधानिक शक्तियों एवं सांख्यकीय सूचनाओं युक्त वन अपराध ब्यूरों स्थापित किया जाना चाहिए।

4.7.3 वन अपराध प्रकरणों के त्वरित निपटारे हेतु जिला स्तरीय विशेष न्यायालय गठित किया जाना चाहिए।

4.7.4 वनों में चराई नियंत्रण के लिए प्रचलित चराई नियमों को वनों की धारक क्षमता के परिपेक्ष्य में ग्रामीण समुदायों की सक्रिय भागीदारी से प्रभावकारी बनाया जाना चाहिए। वनों में पशु चराई उसकी धारक क्षमता से अधिक नहीं होना चाहिए।

4.7.5 वनों में अग्नि को कड़ाई से नियंत्रित किया जाना चाहिए। परिष्कृत एवं आधुनिक तकनीकी एवं उपकरणों जैसे भौगोलिक सूचना प्रणाली एवं सूदूर संवेदनशील तकनीकी द्वारा वन अग्नि को नियंत्रित किया जाना चाहिए।

4.8 वन भूमि का गैर वानिकी प्रयोजन हेतु हस्तांतरण :-

4.8.1 वन भूमि या वृक्षाच्छादित भूमि को विविध परियोजनाओं और कार्यक्रमों के लिए आसानी से उपलब्ध होने वाली संसाधन न समझकर राष्ट्रीय धरोहर समझा जाना चाहिए। जिसके समुचित सुरक्षा का दायित्व एवं सतत उत्पादों के उपभोग का अधिकार समस्त समुदायों को है। वन भूमि का गैर वानिकी कार्य हेतु हस्तांतरण, विशेषज्ञों द्वारा भूमि के पारिस्थितकीय, पर्यावरणीय एवं सामाजिक मूल्यों एवं लाभों के परिपेक्ष्य में अत्यधिक सावधानी से परीक्षण किया जाना चाहिए। जिन प्रकरणों में वन भूमि का हस्तारण किया जाना हो, उसके परियोजना में न केवल पहले से ही पुनरूत्पादन/क्षतिपूर्ति वृक्षारोपण का अपितु क्षेत्र के सामाजिक अधोसंरचना विकास का भी प्रावधान किया जाना चाहिए।

4.8.2 ऐसे हितग्राहियों को जिन्हें वनभूमि एवं वृक्षादित भूमि में खदान स्थापित करने एवं उत्खनन की अनुमति प्राप्त है उन्हें केन्द्र शासन के मार्गदर्शी निर्देशों एवं स्थापित वानिकी सिद्धान्तों के अनुरूप समग्र प्रयोग करना चाहिए। उत्खनित क्षेत्रों में पुनरूद्धार कार्य किया जाना चाहिए ताकि जहां परिस्थितिकीय संतुलन पुनः स्थापित हो सके।

4.9 जैव - सांस्कृतिक विविधता का संरक्षण :-

4.9.1 छत्तीसगढ़ राज्य जैव सांस्कृतिक विविधता से परिपूर्ण है। इस विविधता को निम्न गतिविधियों द्वारा संरक्षित किया जाना चाहिए :-

- राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में जैव सांस्कृतिक संसाधनों के सर्वेक्षण एवं अभिलेखीकरण में तेजी लाना चाहिए। इस सर्वेक्षण में विशिष्ट प्रजातियों / आबादियों एवं समुदायों में वितरण तथा मानवीय-जैविकता के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण वर्गो की जानकारी शामिल किया जाना चाहिए।
- संरक्षित क्षेत्रों जिसमें बायो स्फेयर रिजर्व, राष्ट्रीय उद्यान, अभ्यारण्य, जीन संरक्षण क्षेत्र और लोक संरक्षित क्षेत्रों आदि की स्थापना करते हुए जैव विविधता का संरक्षण किया जाना चाहिए। ऐसे

क्षेत्रों में वे स्थल भी शामिल किये जायेगे जो वर्गीकरण एवं पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण से अत्यंत महत्वपूर्ण है। साथ ही ऐसे पौधे एवं प्राणियों को भी समुचित महत्व दिये जाये तो वर्गीकरण के अन्तर्गत मेरूदण्डधारी एवं अमेरूदंडधारी प्राणी तथा सूक्ष्म पौधे है जो कि स्वस्थ पारिस्थितिकीय तंत्र का संतुलन बनाये रखने में महत्वपूर्ण योगदान देते है। राष्ट्रीय उद्यानों/बायोस्फेयर / जीन संरक्षण केन्द्रों को स्थापित करने में यदि आदिवासियों को विस्थापित किया जाता है तो उन्हें उचित स्थल पर ऐसी जगह पर बसाया जावें जिससे बसाहट उपरांत उनके जीवन स्तर में गुणात्मक सुधार परिलक्षित हो

0 राज्य की जैव - सांस्कृतिक विविधता के संरक्षण के लिए विधिक तथा प्रशासकीय प्रावधानों का भी समावेश किया जावें ताकि जैव चोरी पर प्रभावी नियंत्रण के लिए पौधों तथा वन्य प्राणी आनुवांशिक साधनों का सतत् व समुचित उपयोग राज्य व राष्ट्र हित में किया जा सके। राज्य के नागरिकों विशेषकर आदिवासी के बौद्धिक सम्पदा अधिकारों का सदभावना से संरक्षण किया जाना चाहिए। पौधो तथा वन्य प्राणियों की प्रजाति का संरक्षण कर राज्य को समृद्धिशाली, आनुवांशिक विविधता के एक अभिन्न अंग के रूप में विकसित वन संरक्षित किया जाना चाहिए।

0 राष्ट्रीय उद्यानों अभ्यारक्षित वन क्षेत्रों तथा अन्य संरक्षित क्षेत्रों के मध्य ऐसे महत्पूर्ण गलियारों की पहचान कर उसकी घोषणा किया जाना चाहिए जो पौधों एवं वन्य प्राणियों के आनुवांशिक निरंतरता बनाये रखने के लिए आवश्यक है। ऐसे क्षेत्रों का प्रबंधन वन्य प्राणियों के आवश्यकतानुसार जैसे स्नैग, प्राकृतिक रिक्त स्थल, घास, क्षेत्र, विशिष्ट शैलआवासों, गुफाओं, कन्द मूल एवं जल स्रोतों के संरक्षण द्वारा किया जाना चाहिए।

0 विलुप्तता के कगार पर वन पौधों तथा वन प्राणियों के बाह्य स्थलीय संरक्षण हेतु आधुनिक तकनिकों जैरोअणु कलचर एवं जैव तकनिकी से संरक्षित किया जाना चाहिए।

0 एकल प्रजाति रोपण तथा विदेशी प्रजातियों के रोपण यथा संभव न किया जायें जब तक कि उनकी स्थल पर उपयोगिता वैज्ञानिक अनुसंधान के आधारों एवं प्रयोगों से स्थापित न कर दी गई हो राज्य के वनों में विदेशी वन्य प्राणियों की प्रजातियों को प्रवेश नहीं दिया जाना चाहिए।

0 राज्य के आदिवासी तथा अन्य मूल निवासी जो वनों के समीप रह रहे है उनके समृद्ध सांस्कृतिक विरासत व रीति रिवाजों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए ताकि वे अपने विशिष्ट परस्परव्यापी संबंधो द्वारा स्वयं एवं वनों को लाभ पहुंचा सकें। संरक्षित क्षेत्रों में विद्यमान भौगोलिक एवं सांस्कृतिक परिदृश्यों का प्रबंधन जैव सांस्कृतिक संरक्षण के परिपेक्ष्य में किया जाना चाहिए।

4.9.2 राज्य के समृद्ध जैव विविधता संरक्षण हेतु आवश्यक पहलुओं का वन प्रबंधन में विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए तथा वन प्रबंधन योजनाओं में इसके लिए आवश्यक प्रावधान रखा जाना चाहिए। राज्य के प्रत्येक संरक्षित क्षेत्र हेतु वन्य प्राणी प्रबंधन योजना तैयार किया जाना चाहिए। संरक्षित क्षेत्रों में पारिस्थतिकी विकास एवं स्थानीय जन सहयोग के माध्यम से जैविक दबाव का प्रबंधन किया जाना चाहिए।

वनीकरण, सामाजिक वानिकी एवं कृषि वानिकी :-

4.10.1 राज्य के कम वन क्षेत्र वाले जिलों में समयबद्ध, वनीकरण तथा वृक्षारोपण कार्यक्रम चलाया जाना चाहिए जिसमें मुख्यतः काष्ठ, चारे की आपूर्ति पर विशेष ध्यान दिया जाकर स्थानीय लोगों, मुख्यतः वनों पर आधारित लोगों, विशेष कर भूमिहीन तथा गरीबी रेखा के नीचे रहने वालों की बढ़ती मांग की पूर्ति हो सके।

4.10.2 राजमार्गो, रेल्वे लाईनों, नदी-नालों, नहरों के किनारें और शासकीय व्यवसायिक संस्थागत एवं नीजि अतिशेष भूमियों पर वृक्षारोपण को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। शहरी/ औद्योगिक, उत्खनित क्षेत्रों में हरित पट्टियाँ स्थापित किया जाना चाहिए। ऐसे कार्यक्रम क्षेत्र के सूक्ष्म जलवायु को संवर्द्धित भी करते है।

4.10.3 ऐसी ग्रामीण सामुदायिक भूमि जो कृषि के लिए अनुपोयोगी है उसमें वृक्षोरोपण व चारागाह विकास कार्यक्रम लिया जाना चाहिए।ऐसे कार्यक्रमों को प्रारंभ करने के लिए - तकनीकी तथा वित्तीय सहायता हेतु राज्य शासन / सरकारी उपक्रमों / कृषि विश्वविद्यालयों से सहयोग लिया जाना चाहिए। इससे प्राप्त राजस्व को पंचायत का राजस्व माना जाना चाहिए। अन्य प्रकरणों में ऐसे राजस्व के बड़े अंश को स्थानीय समुदायों में उन्हें एक लाभांश के रूप में वितरित किया जाना चाहिए। व्यक्तिगत लाभों विशेष कर, कमजोर वर्ग, भूमिहीन मजदूर लघु व सीमांत कृषक, अनुसूचित जाति जन जाति, महिला एवं गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों के लगाये गये वृक्षों पर स्वामित्व का अधिकार समुचित प्रावधानों एवं नियमों को निर्धारित करते हुए दिया जाना चाहिए। हितग्राही यदि इस बात की जिम्मेदारी लेते है कि वे वृक्षों की सुरक्षा करेंगे तो स्वयं रोपित वृक्षों में से अपनी आवश्यकतानुसार वनोपज का उपयोग करने के लिए पात्र होंगे।

4.10.4 राज्य की भूमि-राजस्व संहित तथा वन में भी समुचित संशोधन किया जाना चाहिए ताकि वृक्षों के विदोहन, अनुज्ञापत्र तथा वाणिज्यिक नियमों को आवश्यकतानुसार सरल बनाया जा सके और व्यक्तियों तथा संस्थानों को निजी वृक्ष खेती एवं वृक्षारोपण हेतु प्रोत्साहित किया जा सके।

4.10.5 शासकीय वनो में वृक्षारोपण करने हेतु कार्य आयोजना/प्रबंध योजना के प्रावधानों का कड़ाई से पालन किया जाना चाहिए।

4.10.6 राज्य में बढ़ते हुए काष्ठ की मांग तथा आपूर्ति के लिए सिंचित तथा उच्च तकनीक वृक्षारोपण को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। इस दिशा में वन विकास निगम को प्रमुख भूमिका निभाना चाहिए।

4.11 जैविक पदार्थ का उत्पादन :-

राज्य की अधिकांश जनता को जलाऊ, काष्ठ, बांस, चारा तथा रेशों की आवश्यकता सर्वप्रथम है। इस संदर्भ में उत्पादन बढ़ाने तथा ग्रामीण जनता के सतत् स्थाई संसाधन उपयोग संबंधी आवश्यकताओं को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

4.11.1 कार्य आयोजना/प्रबंधन योजना के प्रावधान जैव पदार्थो जैसे काष्ठ के उत्पादन को प्रोत्साहित करना चाहिए। काष्ठ के सुसंगत उपयोगों हेतु आवश्यक कार्यवाही किया जाना चाहिए ताकि इस संसाधन का अधिकाधिक उपयोग हो सके।

4.11.2 घरेलू ऊर्जा से वैकल्पिक साधनों के प्रोत्साहन हेतु प्राथमिकता के आधार पर कार्यवाही किया जाना चाहिए ताकि वनों पर जलाऊ लकड़ी प्रदाय हेतु दबाव कम हो सके।

4.12 वनों पर आधारित उद्योग :-

राष्ट्रीय नीति 1988 के तारतम्य में वनों पर आधारित उद्योगों को इस बात के लिए प्रोत्साहित करना है कि वे अपने उपयोग के लिए कच्चे माल की आपूर्ति निजी वानिकी के माध्यम से करे तथा वैकल्पिक हो सकता है। किसानों

और इच्छुक लोगों को अपनी भूमि और जल संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग सुनिश्चित करने के लिए, कृषि वन वर्धनिक तकनीक सीखने एवं अंगीकार करने हेतु कृषि संस्थाओं के माध्यम से अवसर प्रदान किया जाना चाहिये। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु विश्वविद्यालयों एवं शासकीय विभागों के पास उपलब्ध जन संचार माध्यम, श्रव्य दृश्य उपकरणों और विस्तार मशीनरी की सहायता से तैयार अच्छे कार्यक्रम को प्रचारित करना आवश्यक है।

4.12.1 प्रकृति पर्यटन को प्रोत्साहन :-

प्रकृति, पर्यटन या पारिस्थितिकीय पर्यटन, जो वनों के रमणीक स्थलों तथा संरक्षित क्षेत्रों में वन्य प्राणियों के दर्शन संबंधी अवसर प्रदाय करता है, को वानिकी विस्तार का एक अंग मानना चाहिये। पारिस्थितिकीय पर्यटन की इन गतिविधियों को ग्रामीण समुदायों के आर्थिक विकास प्रणाली के रूप में भी प्रोत्साहित किया जाना चाहिये।

4.13 वानिकी शिक्षा :-

वानिकी को एक वैज्ञानिक विधा एवं व्यवसाय के रूप में मान्यता दी जानी चाहिये। राज्य के मानव संसाधन आवश्यकताओं को देखते हुए वानिकी शिक्षा हेतु समर्पित विश्वविद्यालयों एवं अन्य संस्थानों में स्नातकोत्तर अनुसंधान, शिक्षा एवं उत्कृष्ट व्यवसायिक कौशल के सृजन को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। राज्य वन सेवा में चयन के दौरान अधिकारियों के शैक्षणिक एवं व्यवसायिक योग्यता को दृष्टिगत किया जाना चाहिए।

4.14 वानिकी अनुसंधान :-

पर्यावरण स्थायित्व, ऊर्जा के स्रोत ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर प्रदान करने हेतु वनों का महत्व दिन प्रतिदिन बढ़ रहा है। वानिकी अनुसंधान पर विशिष्ट ध्यान दिया जाना चाहिए जिससे अनुसंधान के आधार को सुदृढ़ कर नवीन प्राथमिकताओं का चयन किया जा सके। राज्य को चाहिए कि वह पारदर्शिता एवं प्रतियोगी भावना के आधार पर अनुसंधान संस्थानों जैसे भारतीय वानिकी अनुसंधान एवं शिक्षा परिषद द्वारा किये जा रहे अनुसंधान कार्यों को आर्थिक सहयोग से प्रोत्साहित कर एवं उनमें समन्वय स्थापित करें। राज्य में अनुसंधान एवं विकास हेतु आवश्यक प्राथमिकता वाले कुछ क्षेत्र इस प्रकार है :-

0 एकीकृत पारिस्थितिकीय प्रणाली को दृष्टिगत रखते हुए बहुस्तरीय नवीन वन वर्धनिक प्रणालियों का विकास।

0 आधुनिक वैज्ञानिक, वन वर्धनिक और तकनीकी विधियों का उपयोग करते हुए गैर काष्ठीय वनोत्पादनों के उत्पादन में प्रति इकाई क्षेत्र, प्रति इकाई समय वृद्धि करना।

0 पड़त/सीमान्त/अनुपयोगी/खदानी क्षेत्रों तथा जल ग्रहण क्षेत्रों को वनस्पतियों से पुनः आच्छादित करना।

0 विद्यमान प्राकृतिक वन संसाधनों का प्रभावकारी संरक्षण एवं प्रबंधन।

0 सामजिक वानिकी, कृषि वानिकी एवं प्रक्षेत्र वानिकी।

0 विभाग एवं नीजि व्यक्तियों द्वारा सभी जिलों में आधुनिक रोपणियों की स्थापना।

0 संयुक्त वन प्रबंधन एवं वन वर्धन वन संसाधनों का समुचित उपयोग महिलाओं तथा आदिवासियों का सशक्तीकरण गरीबी उन्मूलन में वानिकी की भूमिका सामाजिक और जीविकापोर्जन का विश्लेषण, वन नीति, औषधिय पौधो की खेती एवं विपणन विलुप्ता के कगार पर खड़े तथा विलुप्तता के भय से ग्रस्त वनस्पतियों एवं वन्य प्राणियों का संरक्षण वन परिदृष्यवली आधारित वन प्रबंधन वनों के जैव सांस्कृतिक मूल्यों का संरक्षण इत्यादि।

4.15 मानव संसाधन प्रबंधन एवं क्षमता निर्माण :-

वन अधिकारियों की व्यावसायिक क्षमता के स्तर के विकास हेतु शासन को संकल्पित होना चाहिए जिससे उच्च शिक्षित तथा उत्साहित कर्मी आकर्षित हो सके तथा सुदूर एवं विपरीत परिस्थितियों में कार्य करने वाले व्यक्तियों के सेवा प्रकृति में अनुकुल वातावरण तैयार हो सके।

4.15.1 शासन को चाहिए कि वन विभाग में सभी स्तरों पर सतत् रूप से अच्छे प्रशिक्षित व दक्ष कर्मचारियों / अधिकारियों की उपलब्धता को सुनिश्चित करें।

4.15.2 वन कर्मचारियों/अधिकारियों के लिए विशेषज्ञता तथा दक्षता हेतु प्रशिक्षण की भी व्यवस्था होना चाहिए ताकि वे अपनी व्यक्तिगत योग्यता एवं दक्षता को बनायें रखें जिससे वे राज्य में वनों के विकास हेतु नई तकनीको , नये सिद्धान्तों तथा आधुनिक अवधारणाओं से स्वयं को अवगत करा सके। मानव संसाधन विकास की रणनीति में स्थानीय लोगों विशेषकर ग्राम वन समितियों, वन सुरक्षा समितियों तथा इको विकास समितियों की क्षमता विकास को सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

4.16 वानिकी में सूचना प्रोद्योगिकी का उपयोग :-

4.16.1 व्यापक वानिकी डाटा बेस का विकास

राज्य में वानिकी के व्यापक डाटा बेस के विकास तथा उसमें निरंतर परिमार्जन की महत्ता पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। इसके लिए आवश्यक मानव संसाधन एवं कम्प्यूटर उपकरणों से सुसज्जित आधुनिक वानिकी सूचना केन्द्र का गठन किया जाना चाहिए।

4.16.2 भौगोलिक सूचना प्रणाली (जी.आई.एस.) तथा भूमंडलीय स्थिति प्रणाली (जी.पी.एस) का वानिकी प्रबंध में प्रयोग

वानिकी में भौगोलिक सूचना प्रणाली (जी.आई.एस.) तथा भूमंडलीय स्थिति प्रणाली (जी.पी.एस) का बहुत महत्वपूर्ण उपयोग है। आधुनिकी तकनीकों को वानिकी योजनाओं के निर्माण क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन में उपयोगी बनाने हेतु एक पूर्णतः विकसित जी. आई. एस. केन्द्र स्थापित किया जाना चाहिए।

4.16.3 वानिकी में इलेक्ट्रानिक – प्रशासन को प्रोत्साहन

इलेक्ट्रानिक प्रशासन जो सूचना तकनीकी का प्रशासकीय कार्यों में उपयोग है, आज जीवन के हर क्षेत्र में अपना विशिष्ट स्थान बना चुका है। वन प्रशासन में विशेषकर जन साधरण से संबंधित मामलों में इलेक्ट्रानिक तकनीक के अधिकाधिक उपयोग को प्रोत्साहित करते है।

4.16.4 क्षेत्र के परिस्थितिकीय, सांस्कृतिक और सामाजिक प्रभावों का भली भांति अध्ययन किये बिना कुटीर एवं ग्रामीण स्तर के उद्योगों को छोड़कर भविष्य में किसी भी वन आधारित उद्योगों को अनुमति नहीं दिया जाना चाहिए। स्थानीय जनता के ईंधन चारें और इमारती लकड़ी की आवश्यकताओं को वनाधारित उद्योगों के लिए उत्सर्ग नहीं किया जाना चाहिए।

4.16.5 वन आधारित उद्योगों तथा कृषकों के बीच सीधे संबंधों को प्रोत्साहन देना चाहिए ताकि कृषक उद्योगों में लगने वाले कच्चे माल का उत्पादन कर सकें। उद्योगों - कृषक के बीच आपसी तालमेल का परिणाम प्रमुख कृषि भूमियों के प्रति स्थापना तथा छोटे तथा सीमान्त कृषकों के विस्थापन के रूप में नहीं होना चाहिए।

4.16.6 उद्योगों को राज्य के जैविक पदार्थीय संसाधनों के व्यापार में किसी प्रकार का अनुदान नहीं देना चाहिए ताकि वे यथा संभव विकल्प के रूप में गैर वानिकी कच्चे माल के उपयोग हेतु प्रेरित हो सकें।

4.16.7 उद्योगों के लिए भूमि का आबंटन भूमि परिसीमन और राज्य के अन्य भू-नियमों के अन्तर्गत किया जाना चाहिए। इन उद्योगों को किसी प्रकार से राज्य में रह रहे आदिवासियों और अन्य समुदायों को सामाजिक, सांस्कृतिक परम्पराओं पर विपरित प्रभाव डालने की छूट नहीं देना चाहिए।

4.16.8 ऐसी उपयुक्त औद्योगिक तथा तकनीकी प्रणाली विकसीत किया जाना चाहिए जो ग्रमीण शिल्पकारों / कारीगरों को जैव पदार्थो पर आधारित कुटीर उद्योगो को चलाने योग्य बना सके।

4.17 आदिवासी जन समुदाय तथा वन :-

वनवासियों तथा वनों के प्रगाढ़ परस्पर सहजीवी संबंधों को ध्यान में रखते हुए ऐसी समस्त एजेंसियों को जो वनों के प्रबंधन के लिए जिम्मेदार है, जिनमें वनविभाग, वन विकास निगम और लघु वनोपज संघ भी शामिल है, आदिवासियों को वनों के संरक्षण, पुनरूत्पादन और विकास में सहभागी बनाना चाहिए।

0 लघु वनोपज का स्थानीय लोगों विशेषकर आदिवासियों के सहयोजन के साथ संरक्षण, पुनरूत्पादन तथा बिना किसी क्षति के उनकी फसल लेना तथा ऐसी वनोपजों के लिए विपरण की व्यवस्था करना।

0 वन ग्रामों को राजस्व ग्रमों में परिवर्तित करना।

0 आदिवासी हितग्राहियों के आर्थिक स्तर के सुधार कें लिए सामुदायिक आधार पर योजनाएं चलाना।

0 एकीकृत क्षेत्र विकास कार्यक्रमों को मात्र इसलिए नहींलेना कि वनांचलो तथा उसके आस-पास रहने वाले आदिवासियों की आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सकें, अपितु उनसे विद्यमान वनों पर से दबाव भी कम हो सके।

4.18 वन विस्तार :-

स्वेच्छा से ग्रमीणों द्वारा प्रदाय समर्थन और सहयोग के बिना वन संरक्षण का कार्यक्रम सफल नहीं हो सकता। अत: यह आवश्यक है कि ग्रामवासियों के वन उनके विकास और संरक्षण के प्रति प्रत्यक्ष रूप से रूचि उत्पन्न की जावे तथा सामान्य रूप से उनमें वृक्षों एवं वन्य जीवों तथा प्रकृति के महत्व के प्रति चेतना।

4.19 विधिक सहायता एवं अधोसंरचना का विकास :-

इस नीति के प्रभावकारी क्रियान्वयन हेतु समुचित विधिक एवं अधोसंरचना संबंधी सहयोग की आवश्यकता है।

4.20 वानिकी के लिए वित्तीय सहायता :-

राज्य वन नीति के उद्देश्यों को आर्थिक संसाधनों में बिना समुचित पूंजी निवेश के प्राप्त नहीं किया जा सकता है। यह राज्य का महत्वपूर्ण दायित्व है कि वह अपने आर्थिक संसाधनों को वन नीति के क्रियान्वयन हेतु उपलब्ध कराये।

4.21 उपसंहार :-

यह विश्वास है कि अलोच्य वन नीति छत्तीसगढ़ राज्य में पर्यावरणीय स्थिरता, जैव - सांस्कृतिक विविधता संरक्षण को प्रोत्साहित कर वनों में रहने वाले आदिवासी एवं वनों पर आधारित अन्य समुदायों की मूलभूत आवश्यकताओं को पूर्ण करने वाले प्रबंधन कार्यक्रमों का सृजन करेगी।